* पंचम अध्याय *

आँचलिक उपन्यास की दृष्टि से आलोच्य उपन्यासों की भाषाशैली का तुलनात्मक अध्ययन।

: पंचम अध्याय :

आँचलिक उपन्यास की दृष्टि से आलोच्य उपन्यासों की भाषाशैली का तुलनात्मक अध्ययन

कई उपन्यासों में कथा, चरित्र, वातावरण आदि आँचलिक न होते हुए भी वे उपन्यास आँचलिक माने जाते हैं, उनमें स्थित भाषा तत्त्व के प्राबल्य के कारण ही।

उपन्यास में आँचलिकता का ठाठ खडा करने में अंचल की भाषा का बडा भारी योगदान रहता है।

श्री. प्रकाशचंद गुप्त लिखते हैं -

‘‘रेणु के वर्णनों में कवित्व है, प्रकृति के रंगों को उन्होंने कथा में अद्‌भूत शिल्प से सजाया है।’’[1]

यही बात अन्य आँचलिक उपन्यासों की भाषाशैली के संबंध में भी कही जा सकती है।

5.1 आँचलिक भाषा (‘मैला आँचल) :-

आँचलिक भाषा में शब्दों के हल्के गहरे आँचलिक रूप और हल्की गहरी भावोक्तियाँ होती है।

आँचलिकता के हल्के गहरे रूप शब्दों के लोकप्रचलित रूपों तथा आँचलिक भाषा के शब्दों, मुहावरों तथा लोकोक्तियों के विस्तृत प्रयोगद्वारा प्राप्त किये जाते हैं। इस प्रयत्न में शब्दों के विकृत रूप प्रभाव प्रवणता की दृष्टि से अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। उपन्यास के वार्तालाप की भाषा में इनका रंग गहरा हो जाता है।

उपन्यास का अंचल मैथिली भाषा का अंचल है। सामान्यत: उपन्यास की भाषा खडी बोली का वह रूप है, जो मैथिली अंचल के व्यक्तियों द्वारा कचराही बोली के रूप में पहचानी जाती है। इस भाषा में मैथिली भाषा के अनेक शब्द हैं जो लगभग पौने दो सौ के करीब हैं। कुछ शब्द इस प्रकार हैं।

पंचलैट-पेट्रोमैक्स, कनिया-दुलहिन, पुरैन-कमल, गमकौआ-साबुन, भुरूकुवा-भोर का तारा आदि।

इसके अतिरिक्त अनेक शब्दों के अर्थ प्रसंगत: स्पष्ट हो जाते हैं,

जैसे, ‘‘डकैत से बढकर होता है डकैत का झपैंत’’[2]

इसमें झपैंत का अर्थ अत्यंत आसानी से स्पष्ट हो जाता इसका अलग अलग से अर्थ बताने की जरूरत नहीं है। ऐसे ही, ‘‘गरीब और बेजमीन लोगों की हालत खम्हार के बैलों जैसी है। ---मुंह में जाली का ‘जाब’।’’[3]

यहाँ ‘जाब’का अर्थ स्पष्ट हो जाता है।

मैथिली बोली की और एक विशेषता शब्द के साथ समान ध्वनि का उपसर्ग लगाकर बोलने की है, जैसे-

‘फर-फौजदार’, ‘खर-खजाना’, ‘कर-कचहरी’, ‘पर-पंचायत’ आदि।

यहाँ की बोली में सुख संवाद सुनकर भी ‘जुलुम’ शब्द का उपयोग करने की रीति है।

जैसे- जुलुम बात ! जुलुम हंसी, जुलुम खुशी !

उपन्यास में शब्दों के आँचलिक रूप मैथिल प्रवृत्ति के अनुसार ही बने हैं।

जैसे-अस्पताल- ‘इसपिताल’, पढा-लिखा - ‘ए-बी-सी-डी पास’, मिलटरी -‘मलेटरी’, भाषण- ‘भाखन’, डॉक्टर -‘डागडर’। इस प्रकार केवल शब्द ही नहीं तो व्यक्तिवाचक संज्ञाएं भी आँचलिक हो गयी हैं।

जैसे - रामपियरिया, शिवशक्कर सिंघ, रामलगीना बाबू, रामकिरपाल सिंघ आदि।

उपन्यास में पात्रों के व्यक्तित्व के अनुसार भाषा के पृथक् पृथक् रूप भी मिलते हैं।

मैनेजर डफ अंग्रेज अधिकारी है उसकी भाषा का रूप इस प्रकार है - ‘‘अमारा स्टेट में एक भी बडमाश अम नहीं देखने मंगटा।’’[4] पारबती की माँ का छोटा सा नाती है गणेश जिसकी भाषा तोतली है। वह डॉक्टर के लिए कहता है -

‘‘पूलब से छाहेब आया।’’[5]

बंगाली आभारानी देवी बावनदास के मायाग्रस्त होने के प्रसंग पर कहती है,

‘‘भगवानेर व्रत-भंग हडबा असंभव । कारण गुरूतर। तबे आपनार भाग्य भालो जे बेचारा के सूरदासेर कथा मने पडे नि, नईले एतखन आर भगवानेर चोख थाकतो ना।’’[6]

अनेक जगह पात्रों की भाषा में बोली भाषा में प्रचलित अनेक अंग्रेजी शब्दों के तद्भव रूप हैं।

जैसे - रिचरब- रिजर्व, फैसन- फॅशन, लचकर- लेक्चर, ललमुनिया - ॲल्यूमिनियम, पुलोगराम- प्रोग्रॅम, इसमिट- एस्टिमेट आदि।

अंग्रेजी शब्दों के ‘व्ही’ अक्षर का उच्चरण पूर्वी बोलियों में ‘भ’ होता है। इसके कारण ‘चेभरलेट’, ‘भौचर’, ‘भैसचरमन’ आदि अनेक शब्द प्रयुक्त हुए हैं।

अंग्रेजी शब्दों के समान उर्दू शब्द भी उपन्यास के पात्रों की भाषा में हैं।

जैसे - अवाम, इंतकाल, जहालत, जमाना, दस्तखत, इन्कलाब आदि।

उपन्यास का अंचल मैथिली भाषा का अंचल होने के कारण अनेक स्थानों पर शुद्ध मैथिली भाषा का प्रयोग हुआ है। इस भाषा के वाक्य अनपढ लोगों की भाषा में दिखायी पडते हैं।

विश्वनाथप्रसाद की नौकरानी नीलोत्पल के जन्म की सूचना देते हुए कहती है,

‘‘नाती भैल हो -----गुजुर गुजुर हे रै छे !’’[7]

बावनदास जब कलीमुद्दीपुर में स्मग्लिंग की गाडियों को लौटाना चाहता है तब गाडीवान कहता है,

‘‘गाडी त ना लौटी।’’[8]

इसके उत्तर में बावनदास कहता है,

‘‘लौटी ना त ठाढ रही।’’[9]

मेरीगंज में विभिन्न प्रसंगों, समयों में मानर, डिग्गा, झांझ, मृदंग, करताल आदि वाद्यों का उपयोग किया जाता है। रेणु ने मेरीगंज में बजनेवाले इन वाद्यों को सुना ही नहीं है, अपितु इन वाद्यों से निकलनेवाले अर्थों को पहचाना भी है। उदाहरण के लिए ढोल की ताल के अलग अलग रूपों से वह पूरी तरह परिचित हैं। आखाडे का ढोल 'चटधा, गिडधा, चटघा, गिडधा' के द्वारा मल्लों से कहता है -

''आजा, भिड जा, आ जा, भिड जा।''[10] आखाडे के समय बजनेवाले ढोल के हर ताल से दांव-पेंच और काट-मार की बोली निकलती है। यही ढोल जब कालीथान में पूजा के अवसर पर बजता है, तो उसमें से आवाज आती है - 'धागिड-धिन्ना, धागिड धिन्ना ! अर्थात 'जै जगदंबा, जै जगदंबा !''[11]

उपन्यास में अनेक बार उपन्यासकार ने ध्वनिचित्रों का प्रयोग किया है। बादलों के लिए वे लिखते हैं 'छररर-छररर बादल, बिजलियों के चमकने पर गुडगुडुम- गुडुम- गुडम, शंख फूंकने की आवाज तू -- ऊ - ऊ- उ, तो कभी घुंघरू -बंधी खंजडी की 'डिम, डिमिक रू झुनुक झुनुक, कभी तुरही की 'धु-तु-तु-तु ऽऽ--- --धु-तु-तु' आदि ध्वनिचित्र संवादों में एक नयापन लाते हैं।

इनके साथ यहाँ के प्रसिद्ध बिदापत नाच का मृदंग भी अपने खास बोल रखता है।

''तिरकट धिन्ना, तिरकट धिन्ना

धिन तक धिन्ना, धिन तक धिन्ना

धिनक धिनक धा, धिक धिक तिन्ना।''[12]

इस बिदापत नाच के प्रसिद्ध मृंदगिया 'गैनू' के मृदंग की सूखी चमडी बजते समय जी उठती है और आदमी की तरह बोलने लगती है।

बिहारी लोगों की भाषा में लिंग संबंधी दोष अनेक होते हैं। इस कारण 'एक हप्ता के अंदर', 'आपका गाँव में' आदि विकरण संबंधी दोष पात्रों की भाषा में है। लिंग संबंधी दोष भी अनेक स्थानों पर पात्रों की भाषा में स्वभावत: आ गए हैं जैसे -'ढाढस का बाँध', 'लछ्मी के रग रग में' आदि।

उपन्यास में मुहावरों और कहावतों का उपयोग भी बहुत स्थानों पर हुआ है।

यह मुहावरें अपने आप में अत्यंत आकर्षक हैं।

यादव टोली के लोग बालदेव से माफी मांगते समय कहते हैं - ''बालदेव भाई ----हम लोग मूरख ठहरे और तुम गियानी। हम कूप के बेंग हैं।''[13]

कान भरने के लिए सिंघजी कहते हैं,

''काग भुसुंडी इसके कान में मंतर पढ रहा है ---।''[14]

इसके साथ 'नौ-दो-ग्यारह होना', 'मिट्टी का महादेव होना' आदि। कहावतों का भी प्रयोग अनेक स्थानों पर किया है। जैसे - 'पहले जान तब जहान', 'चलनी कहे सुई से कि तेरी पेंदी में छेद', 'बाप काटे घोडा का घास और बेटा का नाम दुरगादास' आदि।

उपन्यास में आँचलिक पात्रों के आपसी वार्तालाप में पूर्ण रूप से आँचलिक भाषा का प्रयोग हुआ है -

''अरे हां हां, बेटा बेटी केकरो, घीढारी करे मंगरो चालनी कहे सुई से कि तेरी पैंदी में छेद! हाथ में कंगना चमका रही हो, खलासी को एक पुडिया सिंदूर नहीं जुटता है ?''

''मुंह संभालकर बात कर नैंगडी ! बात बिगड जायेगी। खलासी हमारा बहन बेटा है --- अपने खास भतीजा तेतरा के साथ भागी तू और गाली देती है हमको ? सरम नहीं आती तुझको ! बेसरमी, बेलज्जी ! गुअर टोली के कलरू के साथ रात- रात भर भैस पर रसलील्ला करती थी सो कौन नहीं जानता है ? तू बात करेगी हमसे ?''

''रे सिंघवा की रखेली ! सिंघवा के बगान का बम्बै आम का स्वाद भूल गई ? तरबन्ना में रात-रात भर लुकाचोरी मैं ही खेलती थी रे ? कुरऑखा बच्चा जब हुआ था, तो कुरअँखा सिंघवा से मुंह-देखौनी में, बाछी मिली थी, सो कौन नहीं जानता।''[15]

इस वार्तालाप को मुहावरों एवं लोकोक्तियों के प्रयोग ने अत्यंत प्रभावशाली बना दिया है।

इसके साथ कई स्थानों पर सूक्तियाँ भी हैं। जैसे -

''जवानी की सुंदरता आग लगाती है और बुढापे की सुंदरता स्नेह बरसाती है।''[16]

सूक्तियों के समान कवियों की सुंदर उक्तियाँ एक स्थान पर याद आती है -

''दुनिया फूस बटोर चुकी है। मैं दो चिनगारी दे दूँगा।''[17] इस प्रकार मुहावरों, कहावतों, सुक्तियों और उक्तियों से उपन्यास की भाषा आकर्षक बनी है।

उपन्यास की भाषाशैली में उचित स्थानों पर अलंकारों का अतिरेक न करते हुए प्रयोग किया है।

उपन्यास के अनेक प्रसंग हास्य, व्यंग्य और विनोद से परिपूर्ण हैं जिसके कारण उपन्यास की भाषा रंजक बनी है।

उपन्यास की महत्त्वपूर्ण विशेषता उसकी गीतात्मकता है। लोकसंस्कृति में लोकगीतों का विशेष महत्त्व होता है। वर्ष के विभिन्न पर्वों पर इस मैथिल अंचल का वातावरण गीतमय हो उठता है। होली के पर्व पर होली, फगुवा, भंडौआ और जोगीडा के गीत गाए जाते हैं। कभी जोगीडा की , ''दिन दहाडे करो डकैती बोल सुराजी बोली'[18] ----की पैनी पंक्तियाँ तो कभी ''अरे बहियाँ पकरि झकझोरे श्याम रे ----''[19] की मन को मोहनेवाली पंक्तियाँ सुनायी देती हैं।

राह में चलते चलते गाये जानेवाले बटगमनी फगुआ जैसे गीत जिंदगी की राह को गीतमय कर देते हैं। भंडौवा गीत 'भकुआ बभना चुम्मा लेवे में जात नहीं जाए रे।' आदि।

खेती ग्राम जीवन की प्रमुख आजीविका है। खेती के विभिन्न अवसरों पर यहाँ गीत गायें जाते हैं। रोपनी के समय बारहमासे की - ''एहि प्रीति कारन सेत बांधल''[20] जैसी गीत की कडी तो झुलनी रागिनी की - ''मास असाढ चढल बरसाती'' [21] आदि गीत गायें जाते हैं। अगर रोपनी के समय या बाद में बरसात खंडित हो जाती है, तो 'जाटजट्टिन' के खेल में भी 'चाननी रात के इँजोरिया हो बाबूजी।''[22] आदि गीत सुनाई देते हैं।

गांव में बिदापत नाच के साथ सावित्री नाच के गीत जैसे - ''आहे सखी चलू फुलवारी देखे है।''[23] इसके साथ व्यक्ति के वैयक्तिक जीवन के अनेक अवसरों जैसे की नीलोत्पल के जन्मोत्सव में सोहर गाया जाता है। गांधीवध के बाद समदाउन गाया जाता है जिसे सुनकर गांवावालों के दिल कलप उठते हैं। समदाउन की

पंक्तियाँ है - ''आँ रे काँचहि बाँस के खाट रे खटोलना।''[24]

डॉ. प्रशांत और कमली के प्रेमप्रसंग में विद्यापति की पंक्तियों को प्रस्तुत किया है।

'अधरक मधु जब चाखन कान्ह, तोहर शपथ हम किछु यदि जाति।''[25]

इसके साथ गांव के मठ में किर्तन गायें जाते हैं। गांव के राजनीतिक गतिविधियों में प्रसंगानुकूल गीत गायें जाते हैं। आँचलिक भाषा का दूसरा रूप गहराई है, जिसमें काव्यत्व एवं भावत्व दोनों प्राप्त होते हैं। उपन्यास की भाषा में भी काव्यत्व एवं भावत्व के सुंदर उदाहरण प्राप्त होते हैं।

''चैत की गोधूली में अपनी सारी तेजी खोकर सूरज ने श्याम सलोनी संध्या के आंचल में अपना मुँह छिपा लिया था। दूर तक फैली हुई ताडों की पंक्तियां कुछ मटमैली, कुछ सिंदूरी- सी पृष्ठ-भूमि में गर्दन उंची करके सूरज को अतल गहराई में डूबते हुए देख रही थी।''[26]

इसी प्रकार ''गुलमुहर के लाल-लाल फूल बुझ गये और अमलतास की पीली ओढनी न जाने कब सरक कर गिर पडी। किंतु योजन गंधा अब भी पागल बना रही है।''[27]

इस तरह से उपन्यास की भाषा काव्यात्मक बनी है। विशेषताओं से परिपूर्ण उपन्यास की भाषा पूर्णत: आँचलिकता का निर्वाह करती है।

5.2 संवाद या वार्तालाप के तत्त्व :-

(1) यथार्थ का आभास

(2) पात्रानुकूल (अनुकूलता)

(3) संक्षिप्तता।

(4) भावानुकूल ।

5.3 'मैला आँचल' उपन्यास के संवाद :-

5.3.1 यथार्थ का आभास :-

उपन्यास में संवादोंद्वारा कथाक्षेत्र, परिस्थिति, वातावरण का यथार्थ चित्रण हो जाता है।

'मैला आँचल' उपन्यास का कथाक्षेत्र पूर्णिया जिले का मेरीगंज गांव है। डॉ. प्रशांत अपनी विदेशी छात्रवृत्ति त्याग इस क्षेत्र में कार्य करना चाहता है। वह मिनिस्टर साहब से कहता है, ''जी, मैं विदेश नहीं जाऊँगा, पूर्णिया और सहरसा के नक्शे को फैलाते हुए उसने कहा था, ''मैं इसी नक्शे के किसी हिस्से में रहना चाहता हूँ। यह देखिए, यह सहरसा का वह हिस्सा जहाँ हर साल कोशी का तांडव नृत्य होता है। और यह पूर्णिया का पूर्वी अंचल जहाँ मलेरिया और काला आजार हर साल मृत्यु की बाढ ले आते हैं।''[28]

इससे पूर्णिया जिले के पूर्वी अंचल के भीषण स्थिति का यथार्थ चित्रण हुआ है जहाँ हर साल मलेरिया और काला आजार से हजारों की तादाद में मृत्यु की बाढ आ जाती है।

पूर्णिया जिले में सरकारी नौकरों, पूजिंपतियों, जमींदारों द्वारा सामान्य जनता पर होनेवाले अन्याय का यथार्थ चित्रण तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद के संवादद्वारा हो जाता है। स्वइच्छा से तहसीलदार की नौकरी त्याग चुके विश्वनाथप्रसाद डॉ. प्रशांत से कहते हैं,

''यह तहसीलदारी पाप की गठरी ही तो थी। यह नया सर्किल मैनेजर आते ही 'आग पेशाब' करने लगा। 'लाल पताका' अखबार ने ठीक ही लिखा था, 'राज पारबंगा के मीरापुर सर्किल का नया मैनेजर नादिरशह का भतीजा है। अब आप ही बताइए डॉक्टर साहब, कि जिन रैयतों के यहाँ सिर्फ एक ही साल का बकाया है, उन पर नालिश कैसे किया जाए ? फिर चुपचाप डिग्री जारी करवाकर नीलाम करो और जमीन खास कर लो। इतना बडा अन्याय मुझसे तो अब नहीं होगा। जमाना कितना नाजुक है, सो तो समझते हैं नहीं। मैंने साफ इनकार कर दिया तो कडककर बोले, नहीं कर सकते तो इस्तीफा दे दो।' गंगा-स्नान से भी बढकर ऐसे पुण्य का अवसर बार-बार नहीं मिलता। तुरंत इस्तीफा दे दिया। सारी जिंदगी तो गुलामी करते ही बीत गई। ------।''[29]

5.3.2 अनुकुलता :-

कथोपकथन पात्रों के स्वभाव के अनुकूल होने चाहिए। उन्हें पात्रों के सामाजिक, बौद्धिक और

सांस्कृतिक स्तर के अनुकूल भी होना चाहिए। आँचलिक उपन्यासों के पात्र जीवन के विशाल क्षेत्र से चुने जाते हैं। इसी कारण पात्रों के वार्तालाप में शैलीगत विविधता उसके पात्रों के विभिन्न सामाजिक और मानसिक स्तरों के कारण उत्पन्न हो जाती है।

'मैला आँचल' में डॉ. प्रशांत, कमली, तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद, ममता के बीच आपसी संवाद में जिस भाषाशैली का रूप दिखाई देता है उससे सर्वथा भिन्न रूप कालीचरन, बालदेव, जोतखीजी लछ्मीदासी के संवाद में दिखाई देता है।

डॉ. प्रशांत उच्चशिक्षित, देशप्रेमी, शहरी व्यक्ति है। उसे अपने ज्ञान से मानवता की सेवा करनी है। वह कहता है, ''मैं फिर काम शुरू करूँगा - यहीं, इसी गांव में। मैं प्यार की खेती करना चाहता हूँ। आँसू से भीगी हुई धरती पर प्यार के पौधे लहलहायेंगे। मैं साधना करूँगा। ग्रामवासिनी भारतमाता के मैले आँचल तले। कम से कम एक ही गाँव के कुछ प्राणियों के मुरझायें ओठों पर मुस्कराहट लौटा सकूँ, उनके हृदय में आशा और विश्वास को प्रतिष्ठित कर सकूँ ---।''[30]

इससे डॉ. प्रशांत के बौद्धिक स्तर के दर्शन हो जाते हैं। यह शहरी पात्र होने से संवाद में किसी आँचलिक शैली का प्रयोग नहीं हुआ है।

गांव के मठ की कोठारिन लछ्मीदासी ग्रामीण पात्र है। वह गांव में अक्सर होते आपसी झगडों का विरोध करते हुए कहती है, ''-----जहाँ छोटी मोटी बातों को लेकर, इस तरह झगडे होते हैं, जहाँ आपस में मेलमिलाप नहीं, वहाँ जो कुछ न हो वह थोडा है। गाँव के मुखिया लोग ही इसके लिए सबसे बडे दोखी हैं। सतगुरूसाहेब कहिन हैं - जहाँ मेल तहाँ सरग है। मानुस जन्म बार बार नहीं मिलता है। मानुस जन्म पाकर परमारथ के बदले सोआरथ देखें तो इससे बढकर पाप क्या हो सकता है ? परमारथ में जो विधिन डालते हैं वे मानुस नहीं। आप लोग सास्तर-पुरान पढे हैं, जग्गभंग करनेवालों को पुरान में क्या कहा है, सो तो जानते ही हैं। ----सब कोई भेदभाव तेयाग के, एक होकर के परमारथ कारज में सहयोग दीजिए। आप लोग तो जानते हैं - परमारथ कारज देह धरो यह मानुस जन्म अकारथ जाए।'-----।''[31]

मठ जैसे आध्यात्मिक पवित्र स्थान पर रहनेवाली लछ्मीदासी के विचारों में उदात्तभावना है तथा उसकी भाषा में आँचलिकता का पुट है।

फुलिया की माँ बिलकुल अनाडी पात्र है। यह अशिक्षित, गवार स्त्री अन्य एक स्त्री से झगडते हुए कहती है, ''अरे हाँ-हाँ, बेटा-बेटी केकरो, घीढारी करे मंगरो। चालनी कहे सूई से कि तेरी पेंदी में छेद। हाथ में कंगना चमका रही हो, खलासी को एक पुडिया सिंदूर नहीं जुटता है ?''[32]

इस संवाद के अनुच्छेद का पहला ही वाक्य लोकोक्ति से प्रारंभ होता है। फिर दूसरे वाक्य में 'चलनी कहे सूई से कि तेरी पेंदी में छेद' इस लोकोक्ति का प्रयोग बडी सहजता से हुआ है। इसे इस निम्नवर्गीय ग्रामीण स्त्री की वाग्विध्दता का पता चलता है। ग्रामीणपात्र में ऐसे प्रयोग की अजीब क्षमता होती है।

इस प्रकार उपन्यास में पात्र के सामाजिक, बौद्धिक और सांस्कृतिक स्तर के अनुकूल संवादों का निर्माण हुआ है।

5.3.3 संक्षिप्तता :-

संवादों का संक्षिप्त होना उसकी प्रभावात्मकता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होता है। बहुत लंबे संवाद उब पैदा करनेवाले और अस्वाभाविक लगते हैं। छोटे संवाद अधिक सफलता से परिस्थिति का योग्य परिचय देते हैं।

विश्वनाथप्रसाद अपनी बेटी के बेहोश होने पर डॉक्टर को लेने आते है तब संक्षिप्त संवादों का निर्माण हुआ है। वे डॉक्टर साहब को पुकारते हैं,

''डाक्टर साहब।''

''कौन?''

''विश्वनाथप्रसाद।''

''आइए। कहिए क्या है ?''

''डाक्टर साहब, जरा एक बार मेरे यहाँ चलिए। मेरी लडकी बेहोश हो गई है।''

''बेहोश! क्या उम्र है ? इससे पहले भी कभी बेहोश हुई थी ?''

''जी ! दो-तीन बार ऐसा ही हुआ था। उम्र ? यही सोलह-सत्रह साल धर लीजिए। जरा जल्दी ---।''

''चलिए।''[33]

इन संक्षिप्त संवादों से कमली की बीमारी तथा उसके पिता की अस्वस्थता का पता चलता है।

5.3.4 भावानुकूल :-

मनुष्य में अनेक भावों का एकत्रिकरण होता है। ये भाव अनेक प्रकार के होते हैं। जैसे हास्य, व्यंग्य, क्रोध, दु:ख आदि। बाह्य परिस्थिति से प्रभाव में मानव में स्थित सुप्त भाव प्रकट हो जाते हैं। इस स्थिति में पात्रों के संवाद भावानुकूल हो जाते हैं।

'मैला आँचल' उपन्यास में अनेक जगह भावानुकूल संवाद प्राप्त होते हैं।

मठ में आया ढोंगी नागबाबा नामक साधु जब लछ्मीदासी पर क्रोधित होता है तब उसके मुँह से अश्लील तथा क्रोधित वाक्यों की झडी लग जाती है।वह लछ्मीदासी पर बरस पडता है, ''तेरी जात को मच्छड काटे। हरामजादी। रंडी। तैं समझती क्या है री ? ऐं, दुनियाँ को तैं अंधा समझती है ? बोल ।----लाल मिर्च की बुकनी डाल दूँ। छिनाल। तै आचारजगुरू को गाली देती है ? तेरे मुँह में कुल्हाडे का डंडा डाल दूँ, बोल। साली, कुत्ती। साधू का रगत बहाती है और बाबू लोग से मुँह चटवाती है। दूँ अभी तेरे गाल पर चाँटा, हट जा यहाँ से, कातिक की कुतिया।''[34]

डॉ. प्रशांत साँप के काटने पर एक प्रभावशाली तथा सस्ती दवा की खोज करने में व्यस्त था। उसके प्रयोग के लिए उसने साँपों को पाल रखा था। उसकी इस बात पर व्यंग करते हुए कमली कहती है,

''तब माटी के महादेव नहीं असली महादेव बन जाइएगा।''[35] ऐसे व्यंग्यात्मक संवादों से प्रसंगों में एक रूचि आ जाती है।

इस प्रकार पात्रों के क्रोध, व्यंग्य आदि भावों के अनुसार संवादों का निर्माण हुआ है।

5.4 आँचलिक उपन्यासों के संवादों के तत्त्व :- (मैला आँचल)

प्रथम दिये हुए संवादों के तत्त्व आँचलिक उपन्यासों के साथ साथ सामान्य उपन्यासों में भी देखे जा सकते हैं। परंतु केवल आँचलिक उपन्यासों के वार्तालाप या संवादों में कुछ ऐसी विशेषताएँ होती हैं जो अन्यत्र देखनें में नहीं आती। ये विशेषताएँ निम्नानुसार हैं।

5.4.1 संवादों में विविधता :-

संवाद का सीधा संबंध पात्रों से होता है। आँचलिक उपन्यासों के पात्र जीवन के विशाल क्षेत्र से चुने जाते हैं इसी कारण जैसी विविधता आँचलिक उपन्यासों में प्राप्त होती है वह अन्यत्र प्राप्त नहीं होती। यह विविधता भाषा एवं शैली दोनों की होती है।

'मैला आँचल' में संपूर्ण मेरीगंज गांव को उपन्यास में स्थान मिला हैं। इसी कारण गांव के हर वर्ग के पात्र उपन्यास का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसी कारण संवादों में विविधता निर्माण हुई है।

'मैला आँचल' में मठ में आयें ढोंगी नागबाबा की भाषा तथा शैली एक निम्नवर्गीय आँचलिक पात्र की भाषाशैली का रूप प्रस्तुत करती है। वह ढोंगी साधु है वह लछ्मीदासी पर गुस्सा हो उसे कहता है,

''तेरी जात को मच्छड काटे। हरामजादी। रंडी। तैं समझती क्या है री ? ऐं, दुनियाँ को तैं अंधा समझती है ? बोल।----लाल मिर्च की बुकनी डाल दूँ। छिनाल। तै आचारजगुरू को गाली देती है ? तेरे मुँह में कुल्हाडे का डंडा डाल दूँ, बोल। साली, कुत्ती। साधू का रगत बहाती है और बाबू लोग से मुँह चटवाती है। दूँ अभी तेरे गाल पर चाँटा, हट जा यहाँ से, कातिक की कुतिया।''[36] अपनी नीच मनोवृत्ति के अनुसार वह लछ्मी दासी को अकारण गालियाँ देता है।

इसी प्रकार गांव के पुलिस का एक सिपाही हीरू नामक व्यक्ति को खून के इल्जाम में गिरफ्तार करने के बाद डाँटते हुए कहता है,

''साला, बोलता काहे नही ? ----नाम गिनाव ऽऽ अपन बाप के जे साथ रहलन। हौने मुँह का देख ऽऽ ताड ऽऽ - चच्चा के तरफ देखके बोलऽ। साला हतियारा कहीं का। ----नरक में भी जग्हा ना मिली ससुरे।''[37]

''ससुरे । ई नीलगाय -जैसन औरत के तूँ अकेले मारा। बन्नूक-उन्नूक ---।''[38]

यह एक सामान्य आँचलिक पात्र है जो अपनी सामान्य मनोवृत्ति नुसार गुनाहगार को फटकारता है।

फुलिया की माँ और रमजूदास की स्त्री इन दोनों के संवाद ग्रामीण नारियों के पारस्पारिक झगडें का उद्‌घाटन करते हैं।

रमजूदास की स्त्री कहती है,

''अरे फुलिया की माये। तुम लोगों को न तो लाज है न धरम। कब तक बेटी की कमाई पर लाल किनारीवाली साडी चमकाओगी ? --- मानती हूँ कि जवान बेवा बेटी दुधार गाय के बराबर है। मगर इतना भी मत दूहो कि देह का खून भी सूख जाए।''[39]

इस पर फुलिया की माँ कहती है, '' अरे हाँ-हॉ, बेटा-बेटी केकरो, घीढारी करे मंगरो। चालनी कहे सूई से कि तेरी पेंदी में छेद। हाथ में कंगना तो चमका रही हो, खलासी को एक पुडिया सिंदूर नहीं जुटता है ?''[40]

आँचलिक भाषा तथा लोकाक्तियों से ये संवाद प्रभावी हुए हैं। बावनदास की सहकारी आभारानी बंगला होने से वह बंगाली भाषा का इस्तमाल करती है। स्वातंत्रसेनानी बावनदास पर पुलिसोंद्वारा हो रहे लाठीमार में बावनदास को बचाते हुए वह कहती है, ''आमार भगवान के मारो ना ----।''[41]

उपन्यास का कथाक्षेत्र मिथीलांचल होने से बहुत से पात्र शुद्ध मैथिली का इस्तमाल करते हैं। तहसीलदार के घर की नौकरानी सेबिया शुद्ध मैथिली में बोलते हुए तहसीलदार को उसके पोते के जन्म की खबर देती है,

''ऊँ। बतहा। नाती भेल हौं।''[42]

''ऊँह। गुजुर-गुजुर है रैछै।''[43]

इसके साथ गांव की अनेक टोलियों की बोलियों की अपनी अपनी विशेषता है।

डॉ. प्रशांत एक उच्चशिक्षित व्यक्ति है तथा उसकी अपनी ही एक भाषा है। वह प्रेम, प्यार, स्नेह को बायोलॉजी के सिद्धांतो से नापते हुए कहता है, ''दिल नाम की कोई चीज आदमी के शरीर में है, हमें नहीं मालूम। पता नहीं आदमी 'लंग्स' को दिल कहता है या 'हार्ट' को। जो भी हो 'हार्ट', 'लंग्ज' या लीवर का प्रेम से कोई संबंध नहीं है।''[44]

इस प्रकार उसकी भाषा में उसके डॉक्टरी पेशे से संबंधित शब्दों को स्थान मिला है।

मैनेजर डफसाहब अंग्रेज होने के कारण वह भारतीय पद्धति से हिंदी नहीं बोल सकता। वह झ को ज, त को ट, ह को अ, द को ड इस प्रकार उच्चरित करता है। वह कहता है, ''अमारा स्टेट में एक भी बडमाश को अम नहीं देखने माँगटा। टुम अमारा टेसीलडार को जूठा बोला। अमारा अमला जूठा ? टुम साला का बच्चा सच्चा ?''[45]

इस प्रकार उसकी हिंदी भाषा शुद्ध हिंदी न होते हुए उसे अंग्रेजी भाषा का पुट है।

इस प्रकार वार्तालाप में शैली के विविध रूप आँचलिक उपन्यास में प्राप्त हो जाते हैं। ये रूप जहाँ एक ओर स्वाभाविकता का संचार करते हैं वहीं वार्तालाप को प्रभावशाली भी बना देते हैं।

5.4.2 समूह वार्तालाप-शैली :-

वार्तालाप की संयोजना भी आँचलिक उपन्यासों में अभिनव रूप में की जाती है। कई बार वार्तालाप पूरे-पूरे खंड में चलते रहते हैं परंतु वार्तालाप करनेवालों के नाम का भी पता नहीं चलता। ऐसी स्थिति में उपन्यासकार का उद्देश्य केवल स्थिति-विशेष को उद्घाटित करना होता है। इस प्रकार आँचलिक उपन्यासकारों ने 'समूह वार्ता शैली' नाम की एक विशिष्ठ शैली का निर्माण किया है। यह वार्तालाप-शैली आँचलिक उपन्यासों की नई देन है।

'मैला आँचल' उपन्यास से इसका एक उदाहरण दिया जा सकता है -

''कॉमरेड वासुदेव और सुन्दरलाल भी गिरिफ्फ---कैसे नहीं गिरफ्फ होगा भाई। एक साल पहले तक किसी ने कभी गंजी भी पहनते नहीं देखा सुनरा को, सो इस गरमी के मौसम में कोट पैंट, गुलबन, मोजा, जूता, चश्मा लगाकर कटिहार जंकतन के मुसाफिरखाना में बैठने से लोग संदेह नहीं करेंगे ? ---सुनते है आधा घंटा में ही दोनों

ने करीब-करीब सभी फेरीवालों को बुलाया और सौदा किया, 'ए चाहवाला सुनता है नहीं ? देहाती समझ लिया है क्या ? ---- चाह लाओ। बिस्कुट। बिस्कुट खाओगे जी सुन्नर ? अरे थडकिलासी बिस्कुट क्या खाओगे जी।' कटिहार के फेरीवाले कैसे चांई होते हैं, सो सबों को मालूम है। उन लोगों ने बहुत बडे बडे लोगों को देखा है, पर ऐसा नहीं। भिखमंगे को चौअन्नी दे दिया, 'जाओ नाश्ता कर लो।'----बस, सी. आई. डी. कहाँ नहीं है। परंतु दोनों को गिरफ्फ कर लिया। भगवान जाने अब और किसका- किसका नाम गिनाता है।

वासुदेव कालीचरन का भी नाम बताया है, सुनते हैं।

'ए----। कालीचरन है कहाँ ?'

'मंगला देवी को कटिहार रखने गया है ?''[45]

इस उद्धरण में समूह पात्र के संवाद की शैलियों के रूप स्पष्ट होते हैं। कौन किससे बोल रहा है यह स्पष्ट नहीं होता। अंचल समूह में ही यह संवाद हो रहा है ऐसा लगता है।

कभी कभी उपन्यास में ऐसे संवाद चित्रित होते हैं कि यह पता ही नहीं चलता कि वास्तव में ये वार्तालाप हैं या उपन्यासकार के कथन ।

जैसे -

''सचमुच गियानी आदमी है। बालदेवजी। आन्डोलन, अनसन और ---और क्या ? ----हिंसाबात। किसी ने समझा ? गियान की बोली समझना सभी के बूते की बात नहीं ----।''[47]

यह बात किसी एक व्यक्ति ने न कहते हुए भी सबके मन की है। उपन्यासकार ने इसे इस तरह से अपनी ओर से कहा है कि वह बात सभी के मुँह से कही लगे।

इसी प्रकार और एक जगह तहसीदार विश्वनाथप्रसाद के दरवाजे पर बैठी पंचायत में कहा जाता है,

'ओ। यह पंचायत सिरफ बेजमीनवालों को ही सीख देने के लिए बैठाई गई है। ---चुप रहो। तहसीलदार जो कह रहे हैं नहीं समझ रहे हो। पक्की बात कहते हैं तहसीलदार ! काबिल आदमी है----।''[48]

तहसीलदार के पक्ष में कौन बोल रहा है यह स्पष्ट नहीं होता है। स्पष्टत: तहसीदार के पक्ष में कोई बोल ही नहीं रहा है परंतु सभी सुननेवालों के ये विचार हैं। इस प्रकार के कथनों की सबसे बडी विशेषता यह होती है कि उनमें लेखक की मौन सम्मति का भी आभास मिलता है। यद्यपि इसकी अनिवार्यता नहीं है।

5.4.3 स्वगत संवाद :-

यह संवाद सामान्यत: भावात्मक होते हैं। कई पात्र भावावेश की स्थितियों में अपने आपसे ही वार्तालाप करने लगते हैं। सामान्य दृष्टि से ऐसे स्थल उनके स्वगत कथन जैसे लगते हैं पर सूक्ष्मता से देखने पर यह भी एक संवादशैली के रूप में दिखाई देते हैं। इसमें पात्र का वैयक्तिक वैशिष्ट्य उभर आता है।

डॉ. प्रशांत के स्वगत संवाद का उदाहरण दिया जा सकता है। यह विशेष उल्लेखनीय उदाहरण है।

''-----वेदांत -----भौतिकवाद -----सापेक्षवाद ----मानवतावाद हिंसा के जर्जर प्रकृति रो रही है। व्याघ के तीर से जख्मी हिरण- शावक- सी मानवता को पनाह कहाँ मिले ? ---- हा---हा ---। अट्टहास। व्याधों के अट्टाहास से आकाश हिल रहा है। छोटा-सा, नन्हा-सा हिरण हांफ रहा है। छोटे फेफडे की तेज धुकधुकी। ---नीलोत्पल। नहीं, नहीं। यह अंधेरा नहीं रहेगा। मानवता के पूजारियों की सम्मिलित वाणी गूंजती है- पवित्र वाणी। उन्हें प्रकाश मिल गया है ---तेजोमय।''[49]

इस पात्र के संवाद में तत्सम शब्दों से निर्मित बिंबात्मक-भाषाशैली, छोटे छोटे वाक्य, एक एक शब्द के वाक्य, गहरे अर्थ संकेतों से युक्त वाक्य हैं। इससे डॉ. प्रशांत का व्यक्तित्त्व उभर आया है।

आँचलिक उपन्यासों के वार्तालाप में शैलीगत विविधता उसके पात्रों के विभिन्न सामाजिक और मानसिक स्तरों के कारण उत्पन्न होती है। 'मैला आँचल' में डॉ. प्रशांत, कमली, तहसीलदार विश्वनाथप्रसाद के बीच आपसी वार्तालाप में जिस भाषा का रूप दिखाई देता है, उससे सर्वथा भिन्न रूप कालीचरन, बालदेव, फुलिया की माँ, जोतखीजी के वार्तालाप में दिखाई देता है।

आँचलिक उपन्यासों के संवादों में शैलीगत विशिष्टता का एक और प्रमुख कारण होता है - आँचलिक या स्थानीय भाषा शैली के शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों तथा विकृत स्वरुपवाले अंग्रेजी, हिंदी के बहुतायत प्रयोग के अतिरिक्त उन स्थानीय भाषा बोलियों की विशिष्ट रचना पद्धति, उनकी लय, टोन और कथन

भंगिमाओं का अपना विशिष्ट स्वरुप।

'मैला आँचल' उपन्यास का कथाक्षेत्र है बिहार राज्य का पूर्णिया जिला। यहाँ की वार्तालाप शैली पर पूर्वी हिंदी याने मैथिली की शैलीगत विशिष्टताएँ प्रभाव डालती हैं।

संवाद की उपर्युक्त शैलीगत विशेषताएँ आँचलिक उपन्यासों की शैली के क्षेत्र में विशिष्ट और नई उद्‌भावनाएँ हैं।

उपर्युक्त विशेषताओं से परिपूर्ण उपन्यास की वार्तालाप शैली पूर्णत: आँचलिकता का निर्वाह करती है।

5.5 आँचलिक भाषा ('पडघवली') :-

आँचलिक भाषा में शब्दों के हल्के गहरे आँचलिक रूप और हल्की गहरी भावोक्तियां होती है।

आँचलिकता के हल्के गहरे रूप शब्दों के लोकप्रचलित रूपों तथा आँचलिक भाषा के शब्दों, मुहावरों तथा लोकोक्तियों के विस्तृत प्रयोगद्वारा प्राप्त किये जाते हैं। इस प्रयत्न में शब्दों के विकृत रूप प्रभाव-प्रवणता की दृष्टि से अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। उपन्यास के वार्तालाप की भाषा में इनका रंग गहरा हो जाता है।

उपन्यास का अंचल कोंकणी भाषा का अंचल है। सामान्यत: उपन्यास की भाषा मराठी है पर वह कोंकणी बोली के रूप में पहचानी जाती है। कोंकणी भाषा के अनेक शब्दों का प्रयोग इसमें हुआ हैं। ऐसे शब्द लगभग पैंतालीस के करीब हैं।

कुछ शब्द इस प्रकार हैं,

जौळ- वादळ, बापूस- वडील, घो-नवरा, परसू- आंगण, सामक्षा- दृष्टांत

गांव में उच्चवर्णीय ब्राह्मणों के साथ निम्नवर्णीय कुलवाडी लोग भी रहते हैं। इन लोगों की बोली भी कोंकणी ही है परंतु उनकी कुछ खास विशेषताएँ होती है।

इनके कुछ विशिष्ट शब्द है, हंयसर- इथे, खंयसर -कुठे

ये लोग 'ल' का उच्चारण 'न' करते हैं।

जैसे - मला - मना

'व' क उच्चारण 'इ' करते हैं।

जैसे - विचारणे- इचारणे

कहीं जगहों पर शब्द की मात्रा का लोप हो जाता है।

जैसे ओरडणे - आरडणे

येतोय -येताय

इस प्रकार विशेषताओं से युक्त कोंकणी भाषा का उपयोग कुलवाडी लोगों द्वारा होता है।

कोंकणी बोली में 'रांडच्या' और 'शिंच्या' इन गालियों का प्रयोग क्रोध के साथ सुख, दु:ख, हास्य तथा नित्य व्यवहार में बडी सहजता से किया जाता है।

हर वाक्य के अंत या बीच में 'हो' शब्द का प्रयोग यहाँ की बोली भाषा की खासियत है।

जैसे - ''म्हादेवा, अरे वीजच पडली हो !''[50]

इसी प्रकार ''सावित्र्ये तूही जा हो बायो सती ।''[51]

कोंकणी बोली में क्रिया के अंत में 'न' प्रत्यय लगाया जाता है। जैसे - असंत - असतन् , फासली - फासलीन् , खाल्ल- खाल्लन् , बसले- बसलेन्

उपन्यास में शब्दों के आँचलिक रूप कोंकणी प्रवृत्तिनुसार बन पडते हैं।

सराध- श्राद्ध, डोस्क- डोक, इतिहाशिक - ऐतिहासिक, परख्यात - प्रख्यात, शिमिट- सिमेंट

उपन्यास में पात्रों के व्यक्तित्वनुसार भाषा के पृथ्थक पृथ्थक रूप भी मिलते हैं।

गांव के मुस्लिमों की भाषा हिंदी शब्दों से युक्त है।

हैंदरचाचा नामक मुस्लिम व्यक्ति अपने बेटे पर क्रोधित होकर कहता है, ''हरामजादा ! साल्याला वाटतांय का हप्रीकेहून पैसा आनला, त जन्नत मिलला ! गावकऱ्यांशी कसा बर्ताव करायचा समजत नाय ! नि माज्या सूनबायला मारायला चालला। चाल घरी !चाल, न्हाय तर आनीक घेतांय ।''[52]

(हरामजादा कहीं का। साला समझता है अफ्रिका से पैसे कमाके लाया तो ज न्नत मिल गयी। गांववालों से कैसा बरताव किया जाय जानता ही नहीं। और मेरी बहु पर हाथ उठाने जा रहा है। चलो घर चलो नहीं तो और मार दूंगा।

कुलवाडी लोगों के भाषा की अपनी ही कुछ खासियत है। सगुणी नामक कुलवाडी स्त्री अंबू से अंबू के मुंबई जाने के निर्णय पर कहती है, ''व्हयनी, तू जातीस खरी, मलाही न्हये बरूबर ! हंयसर करमायचा नाय बामनवाडयात येऊन ट्येकायचा खंयसर ?''[53]

(भाभी तुम जा तो रही हो, पर मुझे भी साथ ले चलो। तुम्हारे बगैर यहाँ मन नहीं लगेगा। ब्राह्मण बस्ती में आकर हम कहाँ रूकें ?)

उपन्यास की भाषा में मुहावरों और कहावतों का उपयोग भी बहुत जगह हुआ है। ये मुहावरें अपने आप में अत्यंत आकर्षक हैं।

उपन्यास के पात्र अपने नित्य व्यवहार में बडी सहजता से कहावतों का प्रयोग करते हैं। कुछ कहावतें इस प्रकार हैं, 'पायावर पाणी घाल म्हटल तर तोरड्या किती तोळ्याच्या !''[54]

'इवल हातावर हागल्याखेरीज डोळ्यात फुंकर सुद्धा घालायची नाही.''[55]

ऐसी कहावतों के प्रयोग से भाषा प्रभावी और रंजक बनी है।

अंबू की फूफेरी सास की सेवा करने के बदले में उनसे कहानी सुनाने की जिद करती है तो वे बडी सहजता से कहावत का उपयोग करते हुए कहती हैं,

''सांगत्ये हो। लबाड आहे मेली ! इवलं हातावर हगल्याशिवाय डोळ्यात फुंकरसुद्धा घालायची नाही!''[56]

(सुनाती हूँ। बहुत लुच्ची हो। कुछ लिये बगैर काम ही नहीं करेगी।)

कहावतों के साथ मुहावरों का भी प्रयोग हुआ है। जैसे की 'पिचासा कावळा करणे' आदि।

अंबू के घर में एकत्रित हुई स्त्रियां बातचीत के दौरान अन्य एक स्त्री के बारे में सहजता से कहती हैं , ''नाही तरी बाईंना पिसाचा कावळा कराच्ची सवेच आहे.''[57] (नहीं तो उन्हें बात को बढा-चढाकर कहने की आदत ही है।)

इस प्रकार मुहावरों, कहावतों से उपन्यास की भाषा आकर्षक बनी हैं।

उपन्यास के अनेक प्रसंग हास्य, व्यंग्य और विनोद से परिर्पूण हैं जिसके कारण उपन्यास की भाषा रंजक बनी है।

उपन्यास में गीतात्मक भाषा का भी प्रयोग हुआ है। लोकसंस्कृति में लोकगीतों का विशेष महत्त्व होता है।नित्य जीवन में विभिन्न प्रसंगों पर इन लोकगीतों का उपयोग किया जाता है।

किसी स्त्री की गोदभराई के प्रसंग पर अन्य स्त्रियोंद्वारा गीत गायें जाते हैं।

जैसे ''किती असुरांनी छळिली धरणी
स्नानसंध्येशी उरले ना पाणी
आदितीच्या उदरी आला बाइ वामन
आला बाइ वामन।।
पहिल्या माशी पुसतसे ऋषी
सांग मला भार्ये तुझीया मानशी
काय काय वाटे बाइ काय काय वाटे।।''[58]

दिन के पहले प्रहर में भूपाली गायी जाती है।

''उठोनिया प्रात:काळी। वदनी वदा चंद्रमोळी।
बिंदुमाधवाजवळी। स्नान करा गंगेचे।।''[59]

मनोरंजन के लिए अंताक्षरी के तौर पर लोकगीत गाये जाते हैं जिन्हें 'ओवी' कहा जाता है।

''पहिली माझी ओवी। पहिला माझा नेम।
तुळशीखाली राम। पोथी वाची।।''[60]

''पडघवली गाव। गेंगाण्या नी राघोभट।

पाठीला दिली पाठ। बंधुराया।।''[61]

अंताक्षरी के साथ किसी घरेलू कार्य के लिए सामूहिकरित्या एकत्रित हुई स्त्रियां लोकगीत गाती हैं।

जैसे, ''आधी मूळ धाडा। चिपळून गाव।

पर्शराम देव। आमंत्रण।।''[62]

शादी-ब्याह के प्रसंग में शादी से संबंधित गीत गायें जाते हैं। इन गीतों की खास विशेषता यह होती है कि जिस व्यक्ति की शादी हो उसका नाम काव्यपंक्ति में डाल गीत रचा जाता है।

दुर्गा नाम की लडकी वधू है तो फिर गीत इस प्रकार बनाया जाता है।

''भिंती सारवोनी। वर काढील्या जिवत्या।

तुझ्या लग्नाच्या मालत्या। दुर्गाबाई।

भिंती सारवोनी।वर कढियेली फुले।

तुझ्या लग्नाचे गव्हले। दुर्गाबाई।।

-------------।।''[63]

इसी प्रकार गांव में किर्तन करनेवाले बुवा किसी व्यक्ति के नाम को ले शीघ्रकाव्य रचते हैं। इसे 'आर्या' कहा जाता है।जिऊआत्या और अंबू के नाम से बुवा द्वारा 'आर्या' रची जाती है,

''पडघवली सुग्रामी जिउआते मृत्यूलोकि जगदंबा

गोजिरवाणी सुंदर सून तिला लाभली अहा अंबा।।''[64]

इस प्रकार गांव में विभिन्न प्रसंगोपर गाये जानेवाले गीतों से उपन्यास की भाषा अत्यंत रंजक और गीतात्मक बनी है।

उपर्युक्त विशेषतासे परिपूर्ण उपन्यास की भाषा पूर्णत: आँचलिकता का निर्वाह करती है।

5.6 'पडघवली' उपन्यास के संवाद :-

5.6.1 यथार्थ का आभास :-

उपन्यास में संवादोंद्वारा कथाक्षेत्र, परिस्थिति, वातावरण का यथार्थ चित्रण हो जाता है।

पडघवली उपन्यास का कथाक्षेत्र महाराष्ट्र राज्य के उत्तर कोंकण का पडघवली गांव है। मुंबई शहर के बढते कारखानों और उद्योगों के कारण पडघवली गांव के साथ साथ संपूर्ण कोंकण के हर गांव की युवाशक्ति मुंबई की ओर आकर्षित होने से संपूर्ण कोंकण प्रदेश उध्वस्त हो रहा है। इस यथार्थ स्थिति का चित्रण कीर्तनकार बुवा के संवादोंद्वारा हुआ है। वे अंबू से कहते हैं,

''ऐकलत काकू, ही काही एकट्या पडघवलीच तऱ्हा नव्हे.''[65] (चाची, यह सिर्फ पडघवली की ही स्थिति नहीं है।)

''आज अक्षयतृतीयेपासून महिना-दिड महिना हिंडतोय कोंकणात. सगळीकडे तीच परी, कुंठ म्हणून तरूण चेहरा काही दिसेना. सगळे म्हातारे नि पोरं, मुंबई बरं ही मुंबई।''[66]

(अक्षय तृतीय से महिना डेढ महिना कोंकण में घूम रहा हूँ। सब जगह स्थिति एक सरीखी, कहीं भी जवान चेहरा दिखाई नहीं दिया। सब जगह बूढें और बच्चे।)

''रामायणात ताटकेच वर्णन आहे. दहा योजनं तोड पसरून ती रामावर धावली. किती सृष्टि तिच्या पोटात गडप झाली. तशी कलियुगात मुंबादेवी राक्षसी झाल्यै. सगळ कोंकण चाटून पुसून खात्यैय ती.''[67]

(रामायण में त्राटिका का वर्णन है। वह दस योजन मुँह खोलकर राम की ओर दौडी। कितनी सृष्टि उसके पेट में हडप हो गयी। उसकी तरह कलयुग में मुंबादेवी राक्षसी हो गयी है। सारा कोंकण चाट-पोछ के खा रही है।)

5.6.2 संक्षिप्तता :-

संवादों का संक्षिप्त होना उसकी प्रभावात्मकता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होता है। बहुत लंबे संवाद उब पैदा करनेवाले और अस्वाभाविक लगते हैं। छोटे संवाद अधिक सफलता से परिस्थिति का योग्य परिचय देते हैं।

पुतली नाम की कुलवाडी स्त्री कुशात्या के देहांत की खबर अंबू को देने आती है तब संक्षिप्त संवादों का निर्माण हुआ है। वह अंबू को पुकारती है,

''व्हयनीबाय- ओ व्हयनीबाय ''

''काय गो पुतल्ये ?''

''हाव् खंय् ?''

''ही बागेत आहे गो!''

''भावजी खुटं हायेत ?''

''ते सुंभ वळताहेत अंगणात.''

''चला.''

''कुठं?''

''येंकूदादांनी बलीवयलय.''

''येंकूदादांनी ? ते गो कशाला ?''

''कुसत्या गेली।''

''हा रांडेच्ये ! म्हणत्येस काय ?''

''हाय त्ये म्हणत्ये!''

''हिकडे याल का?''

''का गो ?''

''कुशात्या गेली हो !''

''केंव्हा ?''

''आत्ताच, पुतली आल्यै सांगायला. हे पहा कालच मला बोलवल होत तिनं नि सांगितलंन् की माझ्यामागं हे सगळ रंग्याचं -''[68]

(''भाभी - ओ भाभी।''

''क्या है पुतल्ये ?''

‘‘आप कहाँ है ?’’

‘‘यही बाग में हूँ।’’

‘‘देवरजी कहाँ है?’’

‘‘वे आंगन में काम कर रहे हैं।’’

‘‘चलिए।’’

‘‘कहाँ?’’

‘‘व्यंकूभाई ने बुलाया है।’’

‘‘व्यंकूभाई ने! वो किस लिए ?’’

‘‘कुशात्या चल बसी।’’

‘‘अरे ! क्या कह रही हो ?’’

‘‘जो सच है वहीं कह रही हूँ।’’

(अपने पति से अंबू कहती है)’’ जरा सुनिये तो ।’’

‘‘क्यों ?’’

‘‘कुशात्या चल बसी !’’

‘‘कब ?’’

‘‘अभी अभी । पुतली वही बताने आयी है। देखिये, कल ही उसने मुझे बुलाकर कहा था कि मेरे पश्चात तुम ही रंग्या की देखभाल करना।)

संवाद इतने संक्षिप्त होने के बाद भी कुशात्या के देहांत की स्थिति का संपूर्ण परिचय मिलता है।

5.6.3 भावानुकूल :-

मनुष्य में अनेक भावों का एकत्रिकरण होता है। ये भाव अनेक प्रकार के होते हैं जैसे हास्य, व्यंग्य, क्रोध, दु:ख आदि। बाह्य परिस्थिति के प्रभाव में मानव में स्थित सुप्तभाव प्रकट हो जाते हैं। इस स्थिति में पात्रों के संवाद भावानुकूल बन जाते हैं।

‘पडघवली’ उपन्यास में ऐसे संवाद प्राप्त होते हैं।

गेंगाण्या राघोभट का नौकर है। एक बार राघोभट सापों के बिलों को उखाडते समय गेंगाण्या को सापों से दक्ष रहने की सूचना देते हैं। तब ढाढसी गेंगाण्या राघोभट के इस अतिदक्ष स्वभाव पर व्यंग करते हुए कहता है,

''आमचा खोत दुंगाण खाजवायचां असऽल तरी बी सांबाळून खाजवील ! (हमारे खोत (मुखिया) साधारण बात में भी अतिदक्ष रहते हैं)

ऐसे व्यंग्यपूर्ण संवादों से प्रसंगों में एक रूचि आ जाती है।

अंबू की ननंद आक्की एक बेवा अनाथ स्त्री है, जो अपनी जिंदगी से नाराज है। वह अपने विरान तथा दु:खी जिंदगी के बारे में अंबू से कहती है,

''खोटं का बोलत्ये वहिनी ? आम्ही म्हणजे देवावरच्या दिवल्या हो! जळायच्या जळायच्या, नि शेवटी केंव्हा तरी विझून जायच्या, कुणी उसासासुद्धा टाकायचं नाही आमच्यासाठी.''[70]

(क्या मैं झूठ बोल रहीं हूँ भाभी ? हम तो मंदिर के जलते दिये। बहुत देर तक जल जल कर अंत में किसी समय बुझ जानेवाले। कोई हमारे लिए आह भी नहीं भरेगा)

इस संवाद से आक्की की दु:खी भावनायें व्यक्त हुई हैं।

एक बार व्यंकूभट के कारस्थानों से क्रोधित हो गुजाभट उसे मारने को दौडता है। क्रोधित गुजाभट को आतेसासूबाई (फुफेरी सास) रोकने का प्रयत्न करती है। तब क्रोधित गुजाभट कहता है, ''नाही आते, पुष्कळदा ऐकलं तुझ ! हा साला गिऱ्होबाला नाही नाही ते बोलतो ! आंबा उतरताना म्हणाला, असला गिऱ्होबा तर धरील मला ! गिऱ्होबा धरील तेव्हां धरील. आगोदर मीच धरतो रांडेच्याचं नरड-''[71]

(नहीं फूफी। बहुत बार तुम्हारा सुन चूका हूँ। यह साला गिऱ्होबा को दोष लगाता है। आम उतारते वक्त कहता है, ''यदि कोई गिऱ्होबा है तो मुझे पकड ले। गिऱ्होबा जब पकडे तब पकड ले। उसके पहले मैं ही उसकी गर्दन पकडता हूँ।'')

इस संवाद से गुजाभट की क्रोधी भावनाएँ व्यक्त हुई हैं।

इस प्रकार पात्रों के व्यंग्य, क्रोध, दु:ख आदि भावों के अनुसार संवादों का निर्माण हुआ है।

5.6.4 अनुकूलता :-

कथोपकथन पात्रों के स्वभाव के अनुकूल होने चाहिए। उन्हें पात्रों के सामाजिक, बौद्धिक और सांस्कृतिक स्तर के अनुकूल भी होना चाहिए। आँचलिक उपन्यासों के पात्र जीवन के विशाल क्षेत्र से चुने जाते हैं। इसी कारण पात्रों के वार्तालाप में शैलीगत विविधता पात्रों के विभिन्न सामाजिक और मानसिक स्तरों के कारण

उत्पन्न हो जाती है।

'पडघवली' में अंबू, महादेवभट, फुफेरी सास,व्यंकूखोत, गेंगाण्या, येसदा अडविलकर आदि अनेक पात्र हैं। इनमें से हर एक के सामाजिक, बौद्धिक और सांस्कृतिक स्तर के अनुकूल संवाद हैं।

धर्मी एक कुलवाडी स्त्री है। वह व्यंकूभट के नौकर की पत्नी है। व्यंकूभट कुशात्या की संप्त्ति हडप करने के लिए कुशात्या के शव से अंगूठा लगवाता है। इस दुष्ट कारनामे का पर्दाफाश धर्मी अंबू के पास करती है परंतु दूसरे दिन रिश्वत के रूप में व्यंकू से सोने की माला लेकर संपूर्ण गांव के सामने वही बात दोहराने से इन्कार करते हुए अंबू से कहती है,

''तां मना वो काय म्हाईत बाय ? मी तुम्हांला न्हाय वलखीत !''[72]

(मुझे कुछ नहीं मालूम, मैं आपको नहीं पहचानती)

''नाय बाय- राती मी इलीच न्हाय हयसर? मी कशाला यीन हो बाय ? माजा डोस्का दुखत होता राती ?''[73]

(नहीं तो, रात को मैं यहाँ आयी ही नहीं। मैं कैसे आती ? रात को मेरे सिर में दर्द हो रहा था।)

इन संवादों से उसकी निम्नमनोवृत्ति, लालची स्वभाव के दर्शन हो जाते हैं। वह कुलवाडी होने से उसकी भाषा आँचलिक होने के साथ साथ उसमें कुलवाडी जाति के विशिष्ट शब्दों का प्रयोग हुआ है।

अंबू की फुफेरी सास एक दयालु, सहकार्य की भावना रखनेवाली स्त्री है। उनके मन में भेदभाव नहीं है। वे गांव के हर व्यक्ति से प्यार करती है। विशेषत: गरीबों के प्रति उन्हें अधिक स्नेह है। इसी कारण गांव की कुलवाडी स्त्रियों की प्रसूति के बाद उनकी सेहत बनाने के लिए वे अपने घर से उन्हें पौष्टिक लड्डू भेज देती । उनकी इस बात पर जब गुजाभट उन्हें टोकता है तब वे कहती है, ''धाडीन रे धाडीन ! मारे मला प्रपादतो आहेस तो ! गुजा, अरे, गरीबांच्या बायकांना कोण करतयं सोळा सोपस्कार ? आपल्याकडून होईल तेवढं कराव.''[74]

(भेज दूँगी जरूर भेज दूँगी। मुझे तो तुम टोक रहे हो। अरे गुजा गरीब औरतों की कौन करता है इतनी खातीर? अपने से जितना बने उतना किया जाय।)

इस संवाद से गावं के मुख्य घर की महिला (फुफेरी सास) का गांव के प्रति रहा स्नेह, उनकी उदारता, ममता के दर्शन हो जाते हैं। उच्चकुलीन (ब्राह्मण) स्त्री होने से उनकी भाषा आँचलिक होते हुए भी उसमें शुद्ध शब्दों का प्रयोग हुआ हैं।

इस प्रकार उपन्यास में पात्र के सामाजिक, बौद्धिक और सांस्कृतिक स्तर के अनुकूल संवादों का निर्माण हुआ है।

5.7 आँचलिक उपन्यासों के संवादों के तत्त्व ('पडघवली')

प्रथम दिये हुए संवादों के तत्त्व आँचलिक उपन्यासों के साथ साथ सामान्य उपन्यासों में भी देखे जा सकते हैं। परंतु केवल आँचलिक उपन्यासों के वार्तालाप या संवादों में कुछ ऐसी विशेषताएँ होती हैं जो अन्यत्र देखने में नहीं आती। ये विशेषताएँ निम्नानुसार हैं-

5.7.1 संवादों में विविधता :-

संवाद का सीधा संबंध पात्रों से होता है। आँचलिक उपन्यासों के पात्र जीवन के विशाल क्षेत्र से चुने जाते हैं इसी कारण जैसी विविधता आँचलिक उपन्यासों में प्राप्त होती है वह अन्यत्र प्राप्त नहीं होती। यह विविधता भाषा एवं शैली दोनों की होती है।

'पडघवली' में संपूर्ण पडघवली गाँव को उपन्यास में स्थान मिला है। इसी कारण गांव के हर वर्ग के पात्र उपन्यास का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसीलिए संवादों में विविधता निर्माण हुई है।

'पडघवली' उपन्यास का व्यंकूखोत है तो उच्चवर्गीय पात्र परंतु अपनी नीच प्रवृत्ति तथा दुष्ट कारस्थानों के कारण वह एक निम्नवर्गीय पात्र बना है। उसकी भाषा तथा शैली एक निम्नवर्गीय आँचलिक पात्र की भाषाशैली का रूप प्रस्तुत करती है। अपनी नीच मनोवृत्तिनुसार वह अंबू की ननंद आक्की के चरित्र पर अक्षेप लेता है। अपने हीन कृत्य को छिपाने के लिए आक्की को बदनाम करते हुए कहता है,

''हडळ रांडेच्ची ! माझ्या आई एवढी ! काळुंद्री ! बंदरावर निघालो नि पाणी प्याव म्हणून घरात शिरलो. त पाणी आणून दिलंन् नि भांड उचलून तोंडाला लावंल, तो अवदेसनं चिमणी विझवून आपला हात धरलंन् माझा! कवटाळीण रांडेच्ची !''[75]

(भूतनी कहीं की । मेरी माँ जैसी। काली कलुटी। बंदरगाह पर जाते समय पानी पीने के लिए यहाँ आया। उसने दिया हुआ पानी पीने लगा तो दिया बुझाकर उसने मेरा हाथ पकड लिया।)

आक्की और अंबू इन दोनों के संवाद ग्रामीण नारियों के पारस्पारिक वार्तालाप का उद्घाटन करते हैं।

अंबू आक्की से कहती है,

‘‘तू ये की गो पाहून आक्ये - भारी छान आरास मांडल्यै हो।’’

‘‘नको.’’

‘‘ का गो ?’’

‘‘नाही लिहिलं कर्मात. त्या वाटेला कशाला जायच वहिनी ?’’

‘‘खोटं का बोलत्ये वहिनी ? आम्ही म्हणजे देवावरच्या दिवल्या हो! जळायच्या जळायच्या, नि शेवटी केंव्हा तरी विझून जायच्या, कुणी उसासासुद्धा टाकायचं नाही आमच्यासाठी.’’[76]

(‘‘तुम जाके देख आओ। बहुत बढिया सजावट की है।’’

‘‘नहीं।’’

‘‘क्यों ?’’

‘‘नहीं। जो नसीब में नहीं। उसकी तरफ क्यों मुडे ? ----

‘‘क्या मैं झूठ बोल रहीं हूँ भाभी ? हम तो मंदिर के जलतेदिये। बहुत देर तक जल जल कर अंत में किसी समय बुझ जानेवाले। कोई हमारे लिए आह भी नहीं भरेगा)

इसी प्रकार महादेव भट और गुजाभट के बीच के संवाद ग्रामीण पुरूषों के बीच के वार्तालाप का उद्‌घाटन करते हैं।

गुजाभट महादेव भट को अपने साथ बाहर चलने को कहते हैं। वह महादेव भट को कहता है,

‘‘चल माझ्याबरोबर.’’

‘‘कुठ ?’’

‘‘मसणात. चल म्हटलं की चलाव. पायावर पाणी घाल म्हटलं तर तोरड्या किती तोळ्यांच्या --’’[77]

(‘‘चल मेरे साथ।’’

‘‘कहाँ ?’’

‘‘जहन्नुम में। चल कहता हूँ तो चलो। आधिक पूछताछ नहीं करनी चाहिए ?---)

गेंगाण्या की मृत्यु के बाद उसकी दो स्त्रियों में सती जाने के प्रश्न को लेकर झगडा होता है। ये संवाद ग्रामीण स्त्रियों के झगडे का उद्घाटन करते हैं।

गेंगाण्या की पत्नी सावित्री राघोभट से कहती है,

''रागूकाका ! मी सोरनार न्हाई माज्या भरताराला.''

''----! पन मना बी जाला तुमी त्याच्या बरूबर !''[78]

उस पर गेंगाण्या की दूसरी पत्नी गोजी कहती है,

''तू गो कोन सती जानार ? मी थोरली. मी सती जाणार.''

पर सावित्री कहती है,

''माज्यावर लय पिरिम होतां माज्या दादल्याचां, मीच जानार. मागं ऱ्हानार न्हाई मी.''[79]

गोजी इस बात पर सावित्री से चिढकर कहती है,

''कवटालनी, तुज्यावर पिरिम होतां, तर माजा काय दायेदार होता का काय? आता कंदी मारीतबिरीत असऽ पर मारल्याबिगर का परपंच चालताय काय ? सांगा हो तुमीच रागूकाका ।''

''मी थोरली। माजा हाक हाय रागू काका । ही हडळ - ''[80]

राघोभट उसे गालियां देने से मना करते हैं, उसपर वह कहती है, ''दीन हज्जारदा दीन ! रांड- हडळ- ''[81]

(''राघूचाचा । मैं मेरे पति को नहीं छोड़ूँगी।'' -----मुझे भी उसके साथ जला डालो। उस पर गेंगाण्या की दूसरी पत्नी गोजी कहती है, ''तुम उसके साथ सती जानेवाली कौन होती हो ? मैं तुमसे बडी हूँ। मैं ही उसके साथ सती जाउंगी।'' पर सावित्री कहती है, ''मुझपर मेरे पति का बहुत प्यार था। मैं ही उनके साथ सती जाउँगी। उनके पीछे नहीं रहूँगी।''

गोजी इस बात पर सावित्री से चीढकर कहती है,

''चांडालनी। उनका तुमपर प्यार था, तो क्या वह मेरा दावेदार था ? अब कभी-कभार मारपीट करता भी होगा, पर बिना मारपीट के गृहस्थी चलती है कहीं भला ? अब आप ही बताइये राघूचाचा। ''मैं बडी हूँ। मेरा पहला हक है राघूचाचा। यह भूतनी।'' राघोभट उसे गालियां देने से मना करते हैं, उसपर वह कहती है, ''दूँगी। हजारबार दूँगी। भूतनी कहींकी।''

गांव में ब्राह्मणों के साथ मुस्लिम, कुलवाडी आदि अन्य जातियों के लोग भी रहते हैं। इनमें से हर जाति की भाषा का अपनी विशेषता होता है।

हैदरचाचा मुस्लिम व्यक्ति है। वह अपने बेटे पर गुस्सा होने पर कहता है,

''हरामजादा। साल्याला वाटतांय का हप्रीकडून पैसा आनला, त जन्नत मिलला ! गावकऱ्यांशी कसा बर्ताव करायचा समजत न्हाय ! नि माज्या सूनबायला मारायला चालला ! चाल घरी ! चाल, न्हाय तर आनीक एक घेतांय !''[82]

मुस्लिम होने से इसकी भाषा में हिंदी शब्दों का उपयोग हुआ है।

कुलवाडी लोगों की भाषा की अपनीही एक विशेषता है। इनकी भाषा में कुछ विशिष्ट शब्दों के साथ साथ 'क' शब्द को 'ल' उच्चारित किया जाता है।

येसदा अडविलकर कुलवाडी है। वह अपनी ओर से अंबू की ननंद दुर्गा को गडंगनेर करते हुए कहता है, ''सुकानी नांदा. दुर्गाताय खयं हाय ? आज आमचा गरिबाचा केलवान ! नाय म्हणून चालायचा नाय !सूनबाय, तांदूळ, दाल, गूल, वाइच तूप, भाजी, सगलां सामान हाय. सैपाक करा. दुर्गातायला रांगोळी घालून पाटावर बसवा नि पोटभर ज्येऊ द्या।''[83]

(सुखी रहो। कहाँ है दुर्गाताई ? आज हम गरीबों का गडंगनेर। ना मत कहना ! बहू चावल, दाल, गुड, थोडासा घी, सब्जी सब सामान लाया हूँ। रसोई बनाओ। दुर्गाताई को रंगोली सजाके थाली परोसना और भरपेट खिलाना।)

इस प्रकार वार्तालाप में शैली के विविध रूप आँचलिक उपन्यास में प्राप्त हो जाते हैं। ये रूप जहाँ एक ओर स्वाभाविकता का संचार करते हैं वहीं वार्तालाप के प्रभावशालीं भी बना देते हैं।

5.7.2 स्वगत संवाद :-

यह संवाद सामान्यत: भावात्मक होते हैं। कई पात्र भाववेश की स्थितियों में अपने आपसे ही वार्तालाप करेन लगते हैं। सामान्य दृष्टि से ऐसे स्थल उनके स्वगत कथन जैसे लगते हैं पर सूक्ष्मता से देखने पर यह भी एक संवाद शैली के रूप में दिखाई देते हैं। इसमें पात्र का वैयक्तिक वैशिष्ट्यउभर आता है।

पडघवली उपन्यास से अंबू के स्वगत संवाद का उदाहरण दिया जा सकता है। पडघवली गांव की उध्वस्त हो रही स्थिति देख अस्वस्थ बनी अंबू सोचने लगती है।

''मेल्यांनो हीच का पडघवली ? का पडघवलीचं भूत हे ? ---तो बांध पऱ्हाचा. ढोपरभर पाणी उरलय त्यात तो बाकीचा पह्या मागं गंगेसारखा वाहायचा. नि आता झाल्यै त्याची सरस्वती ते केवढाले हत्तीसारखे धोंडे मात्र आहेत जागच्या जागी, दरवर्षी अजूनही जागा बदलत्यैय त्यांची, ते जोशाच्यं घर. शाकारायला कौलं काढल्यैन. त्यानं मरणकळा आल्यै त्याला. गिधाडांन खाल्लेल्या ढोरासारख दिसतय ते ठोसराचं, केवढ वैभव होत ठोसराच्या बागेच ! आता एखाद्या बाईचे केस गळावे नि इवलीशी अंबुडी यावी हाताला, तस झालय.

---- नको ते पाहणं । एका पिढीत एवढा फरक ! पडघवलीत आले तेव्हा काय होत नि आता काय राह्यलय ? परमेश्वरा, बाबा, हे दाखवण्यापरीस नेत का नाहीस तुझ्याकडे बोलवून ?''[84]

(मुइयों, यह पडघवली है या पडघवली का भूत ? वह पऱ्हा का बंधारा, उसमें पानी सिर्फ घुटनों तक रहा है। इसके पहले गंगा समान बहता था। अभी उसकी सरस्वती बन गयी है। जगह जगह हाथी जैसे बडे बडे पत्थर वैसे के वैसे पडे है। हर बरस अब भी उनकी जगह बदलती है। वह जोशी का घर। छप्पर की दुरावस्था से कितना दयनीय हो गया है। वह ठोसर की बाग देखो, एक जमाने में क्या वैभव था। गीदड ने खाकर छोडे हुए किसी जानवर के समान दिख रहा है। किसी स्त्री के केश गलकर बने छोटे से जुडे जैसी अवस्था हो गयी है। यह सब देखा नहीं जाता। एक पीढी में इतना फर्क। जब मैं पडघवली में आयी थी तब क्या संप्पन्नता थी और आज क्या स्थिति है ? हे भगवान यह सब दिखाने के बजाय मुझे अपने पास क्यों नहीं बुला लेते ?

इस पात्र के संवाद वैचारिक, छोटे छोटे वाक्यों से युक्त है।

आँचलिक उपन्यासों के वार्तालाप में शैलीगत विविधता उसके पात्रों के विभिन्न सामाजिक और मानसिक स्तरों के कारण उत्पन्न होती है। 'पडघवली' उपन्यास में अंबू, आतेसासूबाई (फुफेरीसास), गुजाभट, महादेव भट के बीच आपसी वार्तालाप में जिस भाषा शैली का रूप दिखाई देता है उससे सर्वथा भिन्न रूप व्यंकूखोत, गेंगाण्या, येसदा आडविलकर के वार्तालाप में दिखाई देता है।

आँचलिक उपन्यासों के संवादों में शैलीगत विशिष्टता का एक और कारण होता है- आँचलिक या स्थानीय भाषाबोली के शब्दों मुहावरों, लोकोक्तियों तथा विकृत स्वरुपवाले, अंग्रेजी, हिंदी के बहुतायत प्रयोग

के अतिरिक्त उन स्थानीय भाषा बोलियों की विशिष्ट रचना पद्धति, उनकी लय, टोन और कथन भंगिमाओं का अपना विशिष्ट स्वरुप ।

'पडघवली' उपन्यास का कथाक्षेत्र है महाराष्ट्र राज्य के उत्तर कोंकण का पडघवली गांव। यहाँ मराठी भाषा बोली जाती है परंतु वार्तालाप शैली पर कोंकणी भाषा की शैलीगत विशेषताएं प्रभाव डालती हैं।

उपर्युक्त विशेषताओं से परिपूर्ण उपन्यास की वार्तालाप शैली आँचलिकता का निर्वाह करती है।

5.8 शैली :-

विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को सुंदर एवं प्रभावपूर्ण बनाने के लिए शैली अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है।

आँचलिक उपन्यासों में इतिवृत्तात्मक या ऐतिहासिक, आत्मकथात्मक, पत्रात्मक, डायरी, नाटकीय, काव्यात्मक, व्यंगात्मक मनोविश्लेषणात्मक, रिपोतार्ज ऐसी अनेक शैलियों का उपयोग किया जाता हैं।

'मैला आँचल' उपन्यास में रेणुजी ने केवल एक ही शैली का प्रयोग न करते हुए इतिवृत्तात्मक, डायरी, पत्रात्मक, चित्रात्मक, मनोविश्लेषणात्मक, काव्यात्मक, व्यंग्यात्मक, रिपोर्ताज आदि शैलियों का मिला जुला प्रयोग किया है। इसमें रिपोर्ताज शैली का नवीन प्रयोग किया है।

आँचलिक उपन्यासों में इतिवृत्तात्मक शैली में स्थानों और पात्रों का परिचय मिलता है। मेरीगंज गांव का परिचय इतिवृत्तात्मक शैली में प्राप्त होता है।

''ऐसा ही एक गांव है मेरीगंज। रौतहट स्टेशन से सात कोस पूरब बूढी कोशी को पार करके जाना होता है। ---- कोसभर मैदान पार करने के बाद, पूरब की ओर काला जंगल दिखाई पडता है, वही है मेरीगंज कोठी।

आज से करीब पैंतीस साल पहले, जिस दिन डब्लू. जी. मार्टिन ने इस गाँव में कोठी की नींव डाली, आस-पास के गावों में ढोल बजवाकर ऐलान कर दिया - आज से इस गाँव का नाम हुआ मेरीगंज ।----।''[86]

डायरी शैली के अंतर्गत डॉ. प्रशांत के रोज मरीजों की केस हिस्ट्री लिखने के प्रसंग को चित्रित किया है।

काला आजार के पचास रोगीयों की वह केस हिस्ट्री लिखता है।

''एक (क) सेबी मंडल, उम्र 35, हिंदू (मर्द) गांव मेरीगंज, पोलिया टोली। तकलीफ : दाँत और मसूडे में दर्द। दतुअन करते समय खून निकलना, मुँह महकना, देह में खुजली, भूख की कमी। बुखार :नही, निदान : पायोरिया।

दवा : कारबोलिक की कुल्ली। विटामिन सी का इंजेक्शन।

(ख) पंद्रह दिन के बाद : शाम को सरदर्द की शिकायत। बुखार 99.5, रात में पसीना ।---कैलशियम पाउडर।

(ग) पाँच दिन के बाद पेट खराब हो गया है। बुखार : 100। कार्मनटिव मिक्शचर। काला आजार के लिए खून लिया गया।

(घ) अल्डेहाइड टेस्ट का फल : (++) काला आजार। चिकित्सा : नियोस्टिबोसन का इजेक्शन।''[87]

उपन्यास में शिक्षित पात्रोंद्वारा पत्रात्मक शैली का उपयोग हुआ है। डॉ. प्रशांत अपने सहपाठी डॉ. ममता को पत्र लिखता है।

ममता,

''तुमने कहा था, पहुँचते ही पत्र देना। पहुँचने के एक सप्ताह बाद पत्र दे रहा हूँ। ----

यह एक नई दुनिया है। इसे वज्रदेहात कह सकती हो।----- ।

काम शुरु कर दिया है। सुबह सात बजे से ही रोगियों की भीड लग जाती है। अभी जनरल सर्वे कर रहा हूँ : खून लेकर परीक्षा कर रहा हूँ। प्यारू कहता है, यहाँ कौआ को भी मलेरिया होता है।

-----।

गाँव के लोग बडे सीधे दिखते हैं, सीधे का अर्थ यदि अनपढ, अज्ञानी और अंधविश्वासी हो तो वास्तव में सीधे हैं वे। ---

मिथिला और बंगाल के बीच का यह हिस्सा वास्तव में मनोहर है। औरते साधारणत: सुंदर होती हैं, उनके स्वास्थ भी बुरे नहीं----।''[88]

जुलूस, भीड, सभा के वर्णन में रिपोर्ताज शैली का प्रयोग हुआ है। गांधीजी के अत्यंसंस्कार का आँखो देखा हाल रेडिओ से प्रसारित होता है जिसमें रिपोर्ताज शैली का प्रयोग हुआ है।

''अब --- अब चंदन की चिता तैयार है। बस अब कुछ ही क्षणों में ---देखिए, पंडित नेहरू देवदास गांधीजी से ---महात्मा जी के सुपुत्र से कुछ कह रहे हैं। ---नरमुंड ---नरमुंड कहीं भी एक तिल रखने की जगह नहीं। अपार

जन-समुह में माना लहरें आ गई हैं, सभी एक बार, अंतिम बार महामानव की पवित्र चिता को अंतिम बार देखना चाहते हैं। ---एबुलैंस गाडियाँ बेहोश लोगों को ढो रही हैं। ---। पश्चिम आकाश में सूर्य अपनी लाली बिखेरकर अस्त हो रहा है और इधर महामानव की चिता में अग्निशिखा---धरती का सूरज अस्त हो रहा है।''[89]

कहीं कहीं रेणु ने एक ही पृष्ठपर या एक ही प्रसंग में एक से अधिक शैलियों का प्रयोग किया है। रेणु शरीर से अधिक आत्मा की धडकन तथा उसकी भाषा सुनते हैं इस कारण उनके उपन्यासों में शरीर और आत्मा के सुंदर समन्वित चित्र उभरे हैं। कोठरिन लछ्मीदासी से संबंधित यह प्रसंग है-

''दो दिन से बदली छायी हुई है। आसमान कभी साफ नहीं होता। दो-तीन घंटे के लिए बरसा रूकी। बूंदा-बूंदी हुई, फिर फुहिया। एक छोटा-सा सफेद बादल का टुकडा भी यदि नीचे की ओर आ गया तो हरहराकर कर बरसा होने लगती है। आसाढ के बादल- रात में मेंढकों की टरटराहट के साथ असंख्य कीट पतंगो की आवाज शून्य में एक अटूट रागिनी बजा रही है- टर्र। मेक् टर्र रर--- मेंकू। ----झि- झि- चि ---किर----किर्र सि-----किटिर---किटिर। झि -- --- टर्र-----।

'कोठरिन लछ्मी' दासिन को नींद आ रही है, चित्त बडा चंचल है। रहरहकर ऐसा लगता है कि उसके शरीर पर कोई पतंगा घुरधरा रहा है। वह रह-रहकर उठती है, बिछावन झाडती है कपडे झाडती है। लेकिन वही सरसराहट---। वह लालटेन की रोशनी तेज कर बीजक लेकर बैठ जाती है -

जाना नहिं बूझा नहिं, समुझि किया नहीं गौन।

अंधे को अंधा मिला, राह बतावे कौन ?

कौन राह बतावें ! नहीं उसने बालदेव जी को जाना है, अच्छी तरह पहचाना है। ---लेकिन विरह-बाण से घायल लछ्मी का मन सिसक-सिसककर रह जाता है।

बिरह बाण जिहि लागिया, ओषध लगै न ताहि।

सुसकि- सुसकि मरि- मरि जिवै, उठे कराहि- कराहि।

किंतु बालदेव जी को क्या पता। ---लछ्मी क्या करे।''[90]

इस चित्र की पृष्ठभूमि में मानवीय संवेदना की प्रस्तुति लेखक ने मनोविश्लेषणात्मक शैली में की है। लछ्मी के आंतरिक संवेगों की पृष्टि काव्य पंक्तियों से की है।

प्रारंभ की दो तीन पंक्तियां वर्णनात्मक शैली में परिवेश उपस्थित करती हैं। इसके बाद तुरंत ही चित्रात्मक शैली में उस परिवेश का एक ध्वन्यात्मक चित्र प्रस्तुत कर देता है जैसे मेंढकों की टरटराहट -कीट पतंगों की अजीब ध्वनियां। इस प्रकार एक ही प्रसंग में मनोविश्लेषणात्मक, वर्णनात्मक, चित्रात्मक शैली का मिलाजुला प्रयोग हुआ है।

उपन्यास में बिदापत नाचवाला पूरा प्रसंग उपन्यासकार की व्यंग्यात्मक शैली का उत्कृष्ट नमूना है।

प्रकृति चित्रण में आलंकारिक - काव्यात्मक शैली का प्रयोग किया है।

''कोठी के बाग में गुलमुहर की बडी- बडी डालियाँ, लाल लाल फूलों से जलती हुई, हवा के हल्के झोकों में हिल-डुल रही थी। अमलतास के पीले फूल नववधू की पीली ओढनी की याद दिला रहे थे। योजनगंधा शाम की हवा में पागलपन बिखेर रही थी। शिरीष के फूलों की पंखुडियाँ मंगल आशीष की तरह झड रही थी। ----।''[91]

इस प्रकार इन विविध शैलियों के कारण उपन्यास के विषयवस्तु की अभिव्यक्ति सुंदर एवं प्रभावपूर्ण बनी है। इस उपन्यास में रिपोर्ताज शैली और व्यंग्यात्मक शैली की प्रधानता रही है। उपन्यास में शायद ही कोई ऐसा पृष्ठ मिले जिसमें एक से अधिक शैलियाँ अपनायी न गयी हो।

'पडघवली' उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा हुआ है। उपन्यास की प्रमुख पात्र अंबू अपने गांव पडघवली के साथ साथ अपनी जीवन कहानी आत्मकथात्मक शैली में प्रस्तुत करती है।

उदा. के तौर पर,उपन्यास की प्रमुख पात्र अंबू अपने पति के देहांत बाद अपनी स्थिति के बारे में कहती है ''कुणी म्हणे, यांना शक्तिपात का काय म्हणतात तो झाला. कुणी म्हणे काही. कुणी म्हणे काही.

काय वाटेल ते का होईना, मी उघडी पडल्ये, एवढी गोष्ट खरी. कुणाला वाटेल, हिच नि नवऱ्याच फारसं सूत तर नव्हत मग एवढ दु:ख का ?

सहजगत्या नाही कळायच ते. सूत नव्हत हेही काही खर नव्हें. कधी कधी त्यांच्या वागण्याची चीड यायची मला.

पण शेवटच त्यांच बाणेदार वागण.

नि नवरा गेल्यावर काय वाटत. ते उमजायला एका खात्यापित्या घरची थोरली सून व्हायला हव एऱ्हवी ते कस उमजेल ? माझ मला भोगायला हव. सगळ कुणाला सांगून काही त्यात वाटा पडण्यासारखा नाही. पण हे गेल्यानं पडघवलीच कितपत नुकसान झाल ?

हे मनान कितीही दुबळे का असेनात, तरी पडघवली या दुबळ्या खांबावर आधारली होती. तो खांब गेला नि मागं सगळ्या दावेदारांना चौखूर उधळायला मोकळीक झाली !''[92]

(लोग सोंचेगे इसकी और पति की जमती नहीं थी फिर इतना दु:ख क्यों ? इतनी आसानी से वह समझ में नहीं आयेगा। दोनों की जमती नहीं थी यह बात भी कुछ सच नहीं। कभी कभी उनके बरताव से मुझे गुस्सा तो आता था, लेकिन उनका अंतिम करारा बरताव- और पति के देहांत बाद क्या स्थिति होती है, इसका आकलन होने के लिए किसी एक संपन्न घर की बडी बहू होना चाहिए। इसके सिवा इस बात का आकलन कैसे हो सकता है ?)

एक ही उपन्यास में अनेक शैलियों का प्रभावी प्रयोग रेणुजी के उपन्यासों की खासियत है, इसके अनुसार, 'मैला आँचल' में इतिवृत्तात्मक, डायरी, पत्रात्मक, चित्रात्मक, मनोविश्लेषणात्मक, काव्यात्मक, व्यंग्यात्मक, रितोर्ताज आदि शैलियों के मिले जुले प्रयोग ने उपन्यास के विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को सुंदर एवं प्रभावी बनाया है।

उसी प्रकार 'पडघवली' उपन्यास में केवल एक ही आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग होने के बावजूद भी दांडेकर जी का भाषा पर प्रभुत्व होने के कारण विषयवस्तु की अभिव्यक्ति सुंदर एवं प्रभावी बनी है।

निष्कर्ष :-

उपन्यास में आँचलिकता का ठाठ खडा करने में अंचल की भाषा का बडा भारी योगदान होता है। आँचलिक भाषा में शब्दों के हल्के गहरे आँचलिक रूप और हल्की गहरी भावोक्तियां होती है। (हल्की गहरी भावोक्तियों में काव्यत्व और भावत्व दोनों होता हैं।)

'मैला आँचल' और 'पडघवली' दोनों उपन्यासों में आँचलिकता के हल्के गहरे रूप शब्दों के लोकप्रचलित रूपों तथा आँचलिक भाषा के शब्दों, मुहावरों तथा लोकोक्तियों के विस्तृत प्रयोगद्वारा प्राप्त किये हैं।

इस प्रयत्न में शब्दों के विकृत रूपों ने प्रभाव प्रवणता की दृष्टि से अपना विशेष महत्त्व रखा है।

दोनों उपन्यासों में पात्रों के व्यक्तित्वानुसार भाषा के पृथ्थक पृथ्थक रूप भी मिलते हैं।

दोनों उपन्यासों में अनेक प्रसंग हास्य, व्यंग्य और विनोद से परिपूर्ण हैं। जिसके कारण उपन्यास की भाषा रंजक बनी है।

लोकसंस्कृति में लोकगीतों को विशेष महत्त्व होता है। दोनों उपन्यासों में जीवन के विभिन्न प्रसंगों पर गाये जानेवाले गीतों को विशेष स्थान मिला है।

आँचलिक उपन्यासों में संवाद का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। संवाद के महत्त्वपूर्ण तत्त्व होते हैं यथार्थ का आभास, संक्षिप्तता, अनुकूलता और भावानुकूलता।

'मैला आँचल' और 'पडघवली' दोनों उपन्यासों के संवाद पूर्ण रूप से इन तत्वों का निर्वाह करते हैं। ये तत्व आँचलिक उपन्यासों के साथ साथ सामान्य उपन्यासों में भी देखे जा सकते हैं। परंतु केवल आँचलिक उपन्यासों के वार्तालाप या संवादों में कुछ ऐसी विशेषताएँ होती हैं जो अन्यत्र देखने में नहीं आती। ये विशेषताएँ निम्नानुसार हैं -

आँचलिक उपन्यासों के पात्र जीवन के विशाल क्षेत्र में चुने जाते हैं। 'मैला आँचल' और 'पडघवली' दोनों उपन्यासों में अनुक्रम से 'मेरीगंज' और 'पडघवली' इन गावों के हर वर्ग के पात्र उपन्यास का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसी कारण संवादों में विविधता निर्माण हुई है।

वार्तालाप शैली के ये विविध रूप जहाँ एक ओर स्वाभाविकता का संचार करते हैं वहीं वार्तालाप को प्रभावशाली भी बना देते हैं।

पात्र का वैयक्तिक विशेष उभारनेवाले स्वगतसंवाद आँचलिक संवादों की महत्त्वपूर्ण विशेषता है।

सामान्यत: भावात्मक होनेवाले इन संवादों के लिए 'मैला आँचल' उपन्यास के डॉ. प्रशांत के स्वगत संवाद का उदाहरण विशेष उल्लेखनिय है, जिसमें उसका पूर्ण व्यक्तित्व उभर आया है।

पडघवली उपन्यास में पडघवली गांव की उध्वस्त हो रही स्थिति देख अस्वस्थ बनी अंबू का स्वगत संवाद विशेष उल्लेखनीय है।

एक ही उपन्यास में अनेक शैलियों का प्रभावी प्रयोग रेणुजी के उपन्यासों की खासियत है, इसके अनुसार 'मैला आँचल' में अनेक शैलियों के मिले जुले प्रयोग ने उपन्यास की विषयवस्तु की अभिव्यक्ति को सुंदर एवं प्रभावी बनाया है।

'पडघवली' उपन्यास में केवल एक ही शैली का प्रयोग होने के बावजूद भी दांडेकर जी का भाषा पर प्रभुत्व होने के कारण विषयवस्तु की अभिव्यक्ति सुंदर और प्रभावी बनी है।

विशेष :-

'मैला आँचल' उपन्यास का अंचल 'मैथिली' भाषा का अंचल है। सामान्यत: उपन्यास की भाषा खडी बोली का वह रूप है, जो मैथिली अंचल के व्यक्तियों द्वारा कचराही बोली के रूप में पहचानी जाती है। 'पडघवली' उपन्यास का अंचल 'कोंकणी' भाषा का अंचल है। उपन्यास की भाषा मराठी है पर वह कोंकणी बोली के रूप में पहचानी जाती है।

'मैला आँचल' उपन्यास की भाषा में मैथिली भाषा के लगभग पौने दो सो शब्द हैं। 'पडघवली' उपन्यास में कोंकणी भाषा के लगभग पैंतालीस शब्द हैं।

ध्वनि चित्रों का प्रयोग रेणुजी की खासियत है, जिसका प्रयोग उन्होंने अपने इस उपन्यास में खुलकर किया है। परंतु 'पडघवली' उपन्यास में दांडेकर जी द्वारा ऐसे ध्वनिचित्रों का प्रयोग नहीं हुआ है।

आँचलिक संवादों में वार्तालाप शैली को महत्त्वपूर्ण स्थान होता है।

'समूहवार्ता शैली' आँचलिक उपन्यासों की नई देन है। 'मैला आँचल' उपन्यास में इस शैली में संवाद मिल जाते हैं परंतु 'पडघवली' उपन्यास में ऐसे संवादों को स्थान नहीं मिला है।

आँचलिक उपन्यासों के वार्तालाप में कभी कभी ऐसे संवाद चित्रित होते हैं कि यह पता नहीं चलता कि वास्तव में ये वार्तालाप हैं या उपन्यासकार के कथन। ऐसे वार्तालाप के उदाहरण 'मैला आँचल'

उपन्यास में प्राप्त होते हैं, परंतु 'पडघवली' उपन्यास में ऐसे वार्तालाप नहीं है।

आँचलिक भाषा का एक रूप भाषा की गहराई है, जिसमें काव्यत्व एवं भावत्व होता है।

'मैला आँचल' उपन्यास भाषा में काव्यत्व एवं भावत्व के सुंदर उदाहरण प्राप्त होते हैं। परंतु 'पडघवली' उपन्यास की भाषा काव्यत्व एवं भावत्व के उदाहरणों से परिपूर्ण नहीं है।

'मैला आँचल' उपन्यास में रेणुजी ने केवल एकही शैली का प्रयोग न करते हुए इतिवृत्तात्मक डायरी, पत्रात्मक, चित्रात्मक, मनोविश्लेषणात्मक, काव्यात्मक, व्यंग्यात्मक, रिपोतार्ज आदि शैलियों का मिला जुला प्रयोग किया है।

'पडघवली' उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा हुआ है।

'मैला आँचल' उपन्यास में रिपोर्ताज और व्यंग्यात्मक शैली की प्रधानता रही है।

'पडघवली' में केवल आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग होने से अन्य शैलियों को कोई स्थान नहीं है।

: संदर्भ-सूची :

1.	कुसुम सोफट उध्रुत -	'फणीश्वरनाथ रेणु' की उपन्यास कला से 'आज का हिंदी उपन्यास'	पृष्ठ. 27
2.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	'मैला आँचल'	पृष्ठ.284
3.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 74
4.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 136
5.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 145
6.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 133-134
7.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 304
8.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 295
9.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 295
10.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 68
11.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 68-69
12.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 76
13.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 16
14.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 40
15.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 59
16.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 97
17.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 176
18.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 125
19.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 123
20.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 184
21.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 186
22.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 181

23. फणीश्वननाथ 'रेणु' - 'मैला आँचल' पृष्ठ. 146
24. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 287
25. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 213
26. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 145-146
27. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 146
28. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 51
29. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 108
30. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 312
31. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 29
32. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 59
33. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 53
34. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 90-91
35. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 106
36. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 90-91
37. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 249
38. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 249
39. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 59
40. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 59
41. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 130
42. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 304
43. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 304
44. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 137
45. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 136
46. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 252-253
47. फणीश्वननाथ 'रेणु' - वही, पृष्ठ. 21

48.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	'मैला आँचल'	पृष्ठ. 178
49.	फणीश्वननाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 311
50.	गो. नी. दांडेकर -	'पडघवली',	पृष्ठ. 11
51.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ.26
52.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 146
53.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 220
54.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 42
55.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 2
56.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 2
57.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 85
58.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 10
59.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 56
60.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 59
61.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 60
62.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 86
63.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 87
64.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 66
65.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 211
66.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 211
67.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 211
68.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 126
69.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 14
70.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 114
71.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 102
72.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 133
73.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 134

74.	गो. नी. दांडेकर -	'पडघवली',	पृष्ठ. 105
75.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 115
76.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 114
77.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 42
78.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 25
79.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 26
80.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 26
81.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 26
82.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 146
83.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 89
84.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 209
85.	गो. नी. दांडेकर -	वही,	पृष्ठ. 173
86.	फणीश्वरनाथ 'रेणु' -	'मैला आँचल',	पृष्ठ. 12
87.	फणीश्वरनाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 97
88.	फणीश्वरनाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 52-53
89.	फणीश्वरनाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 288
90.	फणीश्वरनाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 182-183
91.	फणीश्वरनाथ 'रेणु' -	वही,	पृष्ठ. 145
92.	गो. नी. दांडेकर -	'पडघवली',	पृष्ठ. 173